REVIEWS OF LITERATURE
ISSN: 2347-2723
IMPACT FACTOR : 3.3754(UIF)
VOLUME - 5 | ISSUE - 8 | MARCH - 2018

पूर्व खिलजी राजनीतिक असन्तोष की पृष्ठभूमि – समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. नीरज कुमार गौड़
प्राचार्य , एच के एल कालेज ऑफ ऐजूकेशन,
सम्बध्द पंजाब विश्वविद्यालय, चंड़ीगढ़ गुरूहरसहाय, फिरोजपुर (पंजाब)

सारांश

भारतीय इतिहास के सल्तनत काल में भारतीयों के लिये वंश परिवर्तन कोई नई चीज नहीं थीं जब–तब और बिल्कुल आक्समिक वंशीय क्रातियों ने किसी भी वंश के लिये उनकी सारी सद्भावनायें समाप्त कर दी थीं और यदि उनके ह्रदय में किसी वंश विशेष के प्रति भक्ति विकसित हो भी गयी तो भी परिस्थितियों के वश उसे किसी दूसरे वंश का हस्तान्तरित करने में हिचक न होती। इसलिये सत्ता का हस्तान्तण जनसाधारण के लिये अधिक महत्व का नहीं था।

प्रस्तावना :

भारत का राजनीतिक इतिहास षडयंत्रों एवं विद्रोहों से भरा पड़ा है, चाहे वह प्राचीनकाल हो, मध्यकाल या अधुनिक काल। भारतीय इतिहास का कोई भी साम्राज्य एवं किसी शासक विशेष का शासनकाल इससे अछूता नहीं है। सम्राट की सन्तानें, उसके निकट सम्बन्धी, शासन के अधिकारी, राज्यों के राज्यपाल, सैनिक अधिकारी, अमीर एवं उमरा वर्ग के लोग अपनी महत्वकांक्षाओं की पूर्ति हेतु षडयंत्र करने में संलग्न रहते थे एवं अवसर पाते ही विद्रोह कर देते थे।

भारत में राजनीतिक असंतोष के कारण षडयंत्र रचने एवं विद्रोह करने की प्रवृत्ति यद्यपि प्राचीन काल से ही थी। लेकिन मुसलमानों के भारत में प्रवेश करने के पश्चात् मध्यकाल में इसे अत्याधिक बढ़ावा मिला और मध्यकालीन भारत का सम्पूर्ण इतिहास भयानक षडयंत्रों एवं रक्त–रंजित विद्रोहों से भर गया।

647 ई0 में सम्राट हर्षवर्धन की मृत्यु हुयी और असभ्य जातियों ने भारतवर्ष में प्रवेश किया, जिससे भारत वर्ष में राज्य विप्लव की स्थिति उत्पन्न हो गयी। उन साढ़े तीन शताब्दियों के कलह एवं झगड़ों से पूर्ण युग में जिसका इतिहास अन्धकारग्रस्त है – हम भारत को छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त, स्वतंत्र वंशों द्वारा शासित प्रभुत्वहीन एवं राष्ट्रीय संगठन से रहित देखते हैं और प्रत्येक राज्य में किसी न किसी रूप में असंतोष व्याप्त था।

ग्यारहवीं शताब्दी में मुसलमानों के आक्रमणों ने स्थायी रूप से विदेशी तत्व को प्रवेश दिया। आन्तरिक कलह से खण्डित और सदैव विदेशी विनाशकारी आक्रमणों के लिये उन्मुक्त भारतवर्ष में मुसलमान सैनिकों ने प्रवेश किया और वे दूसरे स्थानों के समान ही साम्राज्य निर्माण करने एवं शान्ति स्थापित करने में प्रयत्नशील रहे।

यह युग युद्ध, रक्तपात, तीव्र परिवर्तन, निर्मम हिंसा, उच्च प्रयत्न एवं राज्य विप्लव का था। यदि हम तात्कालिक व्यक्तियों को उस युग के प्रभाव के बाहर वर्तमानीय दृष्टिकोण से देखें तो उस युग का मानव दानव और युग घृणित दृष्टिगत होगा।

भारत का इतिहास में 647 ई0 से 1000 ई0 तक का काल, छोटी रियासतों तथा पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता का काल था। भारत की भौगोलिक स्थिति, इसके जातीय एवं सामाजिक हितों के संघर्षों की विविधता और निगूढ़ आकांक्षाओं की फलोन्मुख सम्भावनाओं ने यहॉ के जातिगत और राजनीतिक कलह को अनिवार्य बना दिया।

गुलाम वंश के शासन काल में मुसलमानों की आन्तरिक शासन सम्बन्धी दुर्बलता एवं असंतोष का कारण राज्य की राजतंत्रता थी। उनके शासन करने का अधिकार उनकी तलवारों की शक्ति पर निर्भर था। वे हर अवस्था में या तो सफल सेनापति होते थे, या ऐसे व्यक्ति होते थे, जो दरबारी षडयंत्र या राजभवन की क्रान्ति के परिणामस्वरूप सिंहासन पर बैठाये गये थे। इसके अतिरिक्त उनका शासनाधिकार सामन्तों के सहयोग और भक्ति पर निर्भर था जो सदैव अनिच्छा से प्राप्त होता था।

खिलजी शासकों के उत्कर्ष से पूर्व दिल्ली सल्तनत की राजनीतिक आधारशिला, अनिश्चितता और अस्थिरता पर आधारित थी उत्तराधिकार के कोई भी निश्चित नियम नहीं थे और दरबार की राजनीति का एकमात्र उद्देश्य शासक की स्वेच्छाचारी शक्तियों पर अंकुश लगाकर अपना प्रभ ुत्व उत्तरोतर बढ़ाते रहना था, ताकि सुल्तान उनकी शक्ति से दरबार और दरबार के बाहर उन पर पूर्ण रूप से आश्रित होकर रह जाये। प्रमुख दरबारियों की महत्वाकांक्षा यही रहती थी कि वह शासक को अपने अनुसार नियंत्रित करें। सल्तनतकाल के प्रारम्भ से ही प्रान्तीय अधिकारियों के मन में भी राजधानी के प्रभावशाली व्यक्तियों के साथ राजनीति का समान्तर शक्ति संतुलन अपने हाथ में रखने की इच्छा प्रबल रही।

कुतबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद साम्राज्य की विच्छिन्नता जिसे वह (1206–1210 तक) रोके हुए था तीव्र गति से बढ़ी। ऐबक का निर्बलपुत्र जिसका नाम आराम शाह था[1] सुल्तान बना किन्तु एक वर्ष बाद ही अमीरों ने इल्तुतमिश के नेतृत्व में विद्रोह करके इसे (1211 ई0) गद्दी से उतार दिया।

इल्तुतमिश के सुल्तान बनने पर उसने अमीरों की बगावत का दमन करके, अपने शासन काल में अमीरों के षडयंत्रों एवं विद्रोहों पर विजय प्राप्त की। इल्तुतमिश की मृत्यु (1235 ई0) के बाद दस वर्षो तक अव्यवस्था और अराजकता का साम्राज्य रहा। इसी बीच राजमुकट इल्तुतमिश के वंशधरों में इधर से उधर हस्तान्तरित होता रहा। सुल्तान की योग्य पुत्री रजिया ने सिंहासन पर अधिकार करने में सफलता प्राप्त की और तीन वर्ष तक शासन करती रही। अपने निकम्मे पुत्रों के मुकाबले, रजिया की प्रतिभा और साहस को देखकर स्वयं सुलतान उसे अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर गये थे। रजिया का 1236 से 1240 ई0 तक सिंहासन पर अधिकार रहा। अपने शासन काल में इसने अमीरों की शक्ति का दमन करते हुए अपनी योग्यता और सामर्थ्य का परिचय दिया किन्तु उसका स्त्रीत्व ही उसकी सबसे बड़ी निर्बलता सिद्ध हुई।

रजिया का अपने अमीर आखुर के प्रति विशेष झुकाव था। एक अबसीनिया निवासी हब्शी गुलाम को अमीर–आखुर बना देने के कारण रजिया के विरूद्ध तुर्की कुलीनों का रोष जागृत हुआ। उन्हें असन्तोष तो पहले से ही था क्योंकि राज्य की शक्ति मामलूक अधिकारियों के हाथ में चली गयी थी और वे वंचित रह गये थे। उनमें से एक सरहिन्द के शासक अल्तूनिया ने विद्रोह का नेतृत्व किया। चतुर रजिया ने उसे अपनी ओर कर उससे विवाह कर लिया लेकिन विद्रोह इससे सर्वथा शांत न हो सका और अन्त में विद्रोहियों ने रजिया तथा इसके पति को पदच्युत कर दिया और सिंहासन पर उसके एक भाई को बैठा दिया।

इल्तुतमिश के शासनकाल में ही प्रमुख तुर्की अमीरों ने आपस में मिलकर एक दृढ़ संगठन बना लिया था। यह संगठन **"चालीस अमीरों के दल"** के नाम से तथा "तुर्क–ए–चहलगानी" के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इल्तुतमिश ने तो किसी न किसी प्रकार अपने साम्राज्य को उनकी ऑच से सुरक्षित रखा, लेकिन उसकी मृत्यु के बाद तुर्की सरदार नियंत्रण विहीन हो गये और उनकी शक्ति बढ़ने लगी। रजिया के मारे जाने का कारण यही था।

रजिया के बाद जो व्यक्ति सिंहासन पर बैठा वह तर्की अमीरों का ही चुना हुआ था उन्हीं का नामलेवा था। नाम मात्र के शासक के रूप में इल्तुतमिश के किसी भी व्यक्ति को वे स्वीकार कर सकते थे उन्हें चिन्ता केवल इस बात की थी कि समूची शक्ति उन्हीं के हाथों में रहे। नया सूल्तान बहरामशाह अभी दो ही वर्ष शासन पर पाया था कि उसकी हत्या कर दी गयी। बहरामशाह की हत्या से अराजकता उत्पन्न हो गयी और सेना में पूरी तरह से क्षोभ फैल गया था। इल्तुतमिश के पौत्र अलाउद्दीन मसऊद ने शक्ति अपने हाथ में संभाली। प्रारम्भ में उसने कुछ उत्साह और चेतनता का परिचय दिया, लेकिन शीघ्र ही एक निरंकुश शासक बनकर रह गया। विक्षुब्ध सरदारों ने उसे पकड़कर बन्दीगृह में डाल दिया और उसकी जगह इल्तुतमिश के एक दूसरे पूत्र

नासिरूद्दीन महमूद को गद्दी पर (1246 ई0) बैठाया। इस उथल–पुथल से राज्य में अराजक्ता एवं असंतोष का वातावरण उत्पन्न हो गया था।

"तुर्क–ए–चहलगानी" के संगठन, उसकी गतिविधियॉ और उसकी शक्ति का चरम विकास, इसी राजनीतिक असन्तोष की पृष्ठभूमि का द्योतक है। नया सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद (1246 ई0 से 1266 ई0 तक) अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रख सका। यह एक विनम्र और धार्मिक वृत्ति का व्यक्ति था। उथल–पुथल के इस काल के लिये वह उपयुक्त शासक नहीं था लेकिन उसका मंत्री गयासुद्दीन बलवन बहुत योग्य था। वास्तव में नासिरूद्दीन के शासनकाल में वहीं शासन करता था और नासिरूद्दीन के बाद उसी ने सुल्तान पद ग्रहण कर लिया। इस प्रकार पूरे चालीस वर्षों तक बलवन ने हिन्दुस्तान पर शासन किया, बीस वर्ष सुल्तान के बजीर के रूप में और बीस वर्ष सुल्तान की हैसियत से।

इल्तुतमिश के राजवंश के पतन के साथ इलबारी तुर्कों का राजनीति में वर्चस्व हो गया। उनका प्रमुख बलवन राजनीतिक असंतोष का प्रतिफल सिद्ध हुआ। परिणामतः उसे शासक बनने का वह अवसर प्राप्त हुआ जिसके लिये बहुत लम्बे समय से दिल्ली सल्तनत की राजनीतिक "सुल्तान" अर्थात "मुकुट" और उसके अधिकारियों अर्थात सामन्तों के मध्य क्रमशः कशमकश, प्रतिद्वन्द्विता एवं प्रतिस्पर्धा चली आ रही थी।

बलवन ने बजीर के रूप में कार्य करते हुए दोआब के विद्रोही हिन्दू सरदारों के विरूद्ध सैनिक कार्यवाही की, क्योंकि दोआब प्रान्त में सदैव अशान्ति रहती थी। इसी प्रकार बलवन ने पश्चिम में मुल्तान और कच्छ तक के समूचे प्रदेश में उठने वाली विद्रोही शक्तियों का दमन कर उन्हें शांत किया। इसके बाद कुछ काल के लिये बलबन सुल्तान की कृपा दृष्टि से वंचित हो गया। उसकी बढ़ती हुयी शक्ति और प्रभाव ने तुर्की अमीरों तथा दूसरे लोगों के हृदय में ईर्ष्या उत्पन्न कर दी और वे दिन रात उसके विरूद्ध सुल्तान के कान भरते रहते थे। नतीजा यह हुआ कि सुल्तान ने उसे अधिकारच्युत कर दिया। उसके निकलते ही राजकार्य में अव्यवस्था ने घर करना आरम्भ कर दिया। एक इतिहासकार के अनुसार राज्य का कार्य और शान्ति अस्त व्यस्त हो गयी।

बलबन के स्थान पर एक अवसरवादी नव मुस्लिम को, जो हाल ही में हिन्दू से मुसलमान बना था बजीर बना दिया गया। उसकी अव्यवस्था के प्रति तुर्कों में तेजी से असन्तोष घर करने लगा और बलबन को पुनः बिना किसी विलम्ब के, 1254 ई0 में बजीर बना दिया गया। जनता बड़ी प्रसन्न हुयी। बलबन ने दूने उत्साह से अवध के जागीरदारों की बगावत का दमन किया। बलबन ने सिंध के सूबेदारों को भी दण्डित किया। बलबन ने बागी मेवातियों का भी दमन किया और उनके नेताओं को कठोर दण्ड देकर शांति की स्थापना की। सन् 1266 ई0 में सुल्तान नासिरूदीन महमूद की मृत्यु होने से दिल्ली की गद्दी पर बलबन का अधिकार हो गया और उसने अपने राजवंश की स्थापना की।

सुल्तान बलबन के लिये आवश्यक था कि सरदारों की उस संघ शक्ति का भी नाश करे जो इतने दिनों से राजसत्ता को खोखला बनाये हुये थी और अराजकता का कारण बनी हुयी थी। उसने इसी क्रम में शासन प्रणाली को सुव्यवस्थित किया और जो संस्थायें छिन्न–भिन्न हो गयी थी या नष्ट हो गयी थी, उन्हें फिर से अपने पॉव पर खड़ा किया। पैदल और घुड़सवारी सेना के ऊपर राजभक्त अफसरों को नियुक्त किया और सरदारों की उस संघ शक्ति को निर्बल बना दिया, जो सदैव अराजक शक्तियों को उभारने में मदद देती थी। इतना करने के बाद उसने दोआब के शम्सी सरदारों को निर्बल बनाया इन सरदारों को इल्तुतमिश के समय से ही जागीरे मिली हुयी थी। उनकी जागीरे जब्त कर ली और उनके जीवन निर्वाह के लिये राज्य की ओर से उचित पेंशन बॉध दी। इस प्रकार इन जागीरदारों की शक्ति बहुत कम हो गयी।

बलबन ने सिंहासन के गौरव और मर्यादा को कायम रखने में विशेष ध्यान दिया। दो समस्याओं की ओर बलबन का ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित रहता था, एक मंगोलों के आक्रमण का खतरा, दूसरे सूबेदारों के विद्रोह का भय। इन्हीं असंतोष एवं उपद्रवों के कारण यह दिल्ली न छोड़ सका, उसे भय था कि उसकी अनुपस्थिति में कहीं दिल्ली की भी बगदाद जैसी स्थिति न हो जिसे आक्रामकों ने नष्ट कर दिया था। अतः वह इसी असंतोष को देखते हुये किसी दूरस्थ प्रदेश को जीतने की बात सोच भी न सका। केवल एक बार बलबन को सैनिक कार्यों के लिये राजधानी से दूर जाना पड़ा। बंगाल के सूबेदार तुगरिल खॉ ने विद्रोह करके सुल्तान की उपाधि धारण कर ली और अपने को दिल्ली सल्तनत से स्वतंत्र घोषित कर दिया। उसी के विरूद्ध बलबन को कार्यवाही करनी पड़ी। भारी वर्षा के दिनों में ही बलबन ने लखनौती की ओर प्रयाण किया और जाजनगर पर धावा बोला जहॉ विद्रोही सूबेदार भाग कर छिप गया था। तुगरिल की सेना सहज ही तितर–बितर हो गयी। सुल्तान ने

विद्रोही सूबेदार के सम्बन्धियों तथा अन्य साथियों का कठोर दण्ड दिये। इतना कठोर दण्ड भारत में पहले अन्य किसी बादशाह या विजेता ने नहीं दिया था।

बलबन ने शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने की ओर विशेष ध्यान दिया। अपने दूसरे पुत्र बुगरा खॉ को सूबेदार बना दिया और उसे चेतावनी दी "दिल्ली के विरूद्ध कभी विद्रोह न करे, विद्रोह करने का क्या परिणाम होता है, यह तुम देख ही चुके हो। सूबे का शासन गम्भीर होकर करना, व्यर्थ के खेल तमाशों और व्यसनों से दूर रहना।"

बलबन की मृत्यु (1286 ई0) के बाद अमीरों ने शाहजादा मुहम्मद के पुत्र के दावे की उपेक्षा कर कैकुबाद को गद्दी पर बैठा दिया यह बुगरा खॉ का सत्रह वर्षीय दुर्बल हृदय लड़का था उसके दादा सुल्तान ने कड़े नियंत्रण में उसका लालन पोषण किया था। अब एकाएक सभी नियंत्रणों से मुक्त हो जाने, सबसे बड़ी गद्दी हाथ में आ जाने से उसका सिर फिर गया और वह पूर्णरूपेण दुर्व्यसन और दूराचार के दलदल में फॅस गया।

इस प्रकार बलबन ही प्रथम व्यक्ति था जिसने क्रमानुसार सामन्तों की शक्ति "विष के स्वच्छन्द प्रयोग द्वारा" तथा "जल्लाद की तलवार" द्वारा नष्ट करना प्रारम्भ किया, लेकिन उसका लक्ष्य पूर्ण रूप से तुर्की सामन्त शाही को पूर्ण रूप से नष्ट करना नहीं था, वरन् उसको एक केन्द्रीय शक्ति के अधीन करना था। जब उसका प्रबल हाथ हट गया तो तुर्कों ने फिर कठपुतली राजा, सुभीत सामन्तशाही और त्रस्त जनता का खेल आरम्भ कर दिया किन्तु उसके द्वारा दिये गये प्रोत्साहन और इस क्रिया द्वारा अग्रसर किये गये विद्रोह की शक्तियों ने तुर्की सामन्तों की शक्तियों और सम्मान को बड़ा धक्का पहुॅचाया।

13वीं शताब्दी में भारत के प्रथम उल्लेखनीय व्यक्ति बलबन की मुत्यु शासकीय कलह तथा जनसाधारण के चरित्र के शिथिल होने की चेतावनी थी, उसका उत्तराधिकारी मईजुद्दीन कैकुबाद हुआ और अपने कार्यों की वजह से सरकारी कर्मचारियों की घृणा और निराशा का पात्र हुआ। राजा के कार्यों के प्रति प्रमादग्रस्त, यौवन और सुरा के मद से मस्त वह दिल्ली के कोतवाल मलिक उर उमरा फखरूद्दीन के जामाता निजामुद्दीन के विनाशकारी प्रभाव में पड़ गया। मलिक निजामुद्दीन एक प्रसन्न सहचर और निपुण राजनीतिज्ञ था, परन्तु अत्यन्त तृष्णालु और भोग–विलास के लिये अपनी विचारहीन ललक के कारण निजामुद्दीन ने सर्वप्रथम अपने हाथों को कैखुसरों का बध कराने से मलीन किया जो अपनी मुल्तान की जागीर से बुलाया गया था। कैखुसरों की हत्या के कारण नगर में भय की एक लहर दौड़ गयी, परन्तु किसी को निजामुद्दीन को दोषी ठहराने का साहस न हुआ। अभीष्ठ राजसत्ता की प्राप्ति में इस विघ्न को हटाने के पश्चात् उसने नियमित विधि से उन सामन्तों के नाश का कार्य प्रारम्भ किया जो बलबनी दरबार में उन्नतशील थे। प्रधानमंत्री ख्वाजा खातिर का, अपमान किया गया और उसे गधे पर बिठाकर सारे नगर में घुमाया गया। मुगल सामन्तों को गिरफ्तार किया गया और उनका बध किया गया। इस प्रकार एक सार्वजनिक असुरक्षा की भावना सामन्तों में फैल गयी।

सुल्तान कैकुबाद के पिता बुगरा खॉ ने बंगाल में नासिरूद्दीन की पदवी ग्रहण की, अपने नाम की मुद्रा जारी की, और खुतबा पढ़वाया था जब उसे देहली की अव्यवस्थित स्थिति का ज्ञान हुआ और यह ज्ञात हुआ कि किस रूप में उसका पुत्र विनाश की ओर अग्रसर हो रहा है तो उसने उससे मिलने और सलाहकार मित्र निजामुद्दीन की कुटिल कूटनीति से सूचित करने का निश्चय किया। पिता–पुत्र की भेंट घाघरा नदी के तट पर हुयी। नम्र व्यहार के आदान प्रदान के पश्चात् पिता ने पुत्र को चेतावनी दी कि वह राजकार्यों के प्रति अधिक सचेत रहे और सांसारिक सुखों में कम लीन रहे। इस भेंट के पश्चात् कैकुबाद राजधानी में वापिस आया। उसने निजामुद्दीन को मुल्तान जाने तथा राज्यपाल के पद को, जो कैखुसरों की मृत्यु के पश्चात् रिक्त हो गया था, ग्रहण करने की आज्ञा दी। निजामुद्दीन ने यही अनुभव करते हुए कि उसने राजा का विश्वास खो दिया है, जाने में हिचकिचाहट की, लेकिन इससे असन्तुष्ट कुछ तुर्की जागीरदारों ने सुल्तान के समर्थन से इसका अन्त विष द्वारा कर दिया। मलिक फिरोज जो कि समाना में नायब और दरबार में सरजानदार था, बुलाया गया। इससे शाइस्ता खॉ की पदवीं और बदायूॅ की जागीर प्रदान की गयी। इसके साथ ही इसे अर्ज–ए–ममालिक भी बनाया गया।

इसके पश्चात शीघ्र ही कैकुबाद अधिक शिकार एवं शराब के कारण लकवे का शिकार हुआ और जागीरदारों ने उसके जीवन से निराश होकर उसके अल्पवयस्क पुत्र को सुल्तान शमसुद्दीन की पदवी से गद्दी पर बिठाया। तु र्की जागीरदारों ने जो दरबार और सेना में विदेशी सामन्तों के प्रभाव के कारण–विशेषतः खिलजी अमीरों से ईर्ष्या रखते थे, गुप्त हत्या द्वारा उन्हें अपने मार्ग से हटाने का षड़यंत्र रचा। ऐसे जागीरदारों

की एक सूची तैयार की गयी, जिसमें प्रारम्भ का नाम खिलजी अमीरों एवं मालिकों के नायक फिरोज का था, जो सेना में अपनी वीरता और सैनिक योग्यता के कारण अन्यन्त प्रभावशाली था। इस षड़यंत्र का ज्ञान होते ही मलिक फिरोज सचेत हो गया। उसने शीघ्र ही बहारपुर आकर अपने सहायकों को एकत्रित किया और षड़यंत्रकारियों को पराजित एवं कत्ल कर दिया। उसके पुत्र निर्भीकता से नगर में घुस गये और शिशु सुल्तान एवं देहली के कोतवाल के पुत्रों को पकड़ लाने में सफल रहे। नगर में खलबली मच गयी और कुछ जनसमूह शिशु सुल्तान को छुड़ाने के लिये एकत्रित होने लगे परन्तु अपने पुत्रों की प्राण हानि के भय से मलिक फखरूद्दीन ने समझा–बुझाकर इस जन समूह को तितर–बितर कर दिया। फलस्वरूप जलालुद्दीन की शक्ति और भी बढ़ गयी और उसका विरोध करना व्यर्थ समझकर अनेक तुर्की अमीर एवं मलिक उसके पक्ष में सम्मलित हो गये। दो दिन बाद शक्तिहीन, लकवाग्रस्त कैकुबाद को एक खिलजी मलिक ने जिसके पिता का उसने वध किया था, उसके अत्यन्त विलास स्थान शीश महल में विस्तर में लपेटकर पादघातों से ठण्डा कर दिया और उसके शव को यमुना में फैंक दिया। ऐसे अपमानपूर्ण रूप में दास वंश का अंत हुआ। अब जलालुद्दीन फिरोज को शत्रुओं एवं मित्रों सभी का समर्थन प्राप्त होने लगा। इस प्रकार अराजकता एवं अशान्ति के कारण देहली का राज्य खिलजियों के हाथ में पहुँच गया। यह वंश परिवर्तन खिलजी क्रान्ति का सूत्रपात था, जिसने शक्ति प्रयोक्ता, अनियमित, निर्दयी शासन का अंत किया। वृद्ध सुल्तान का समस्वभाव और वृद्धावस्था में मुसलमानों के रक्तपात से विमुखता तथा खिलजियों की अधीनता को असहाय समझने वाले दिल्ली वासियों की भावुकता पूर्ण, घृणा, परिवर्तन के तात्कालिक प्रभाव को दूर करने में सहायक सिद्ध हुआ।

इस खिलजी क्रान्ति के परिणाम सुदूरगामी हुये इससे न केवल एक नवीन वंश का उदय हुआ, बल्कि उसने अनवरत विजयों, विद्रोहों, कूटनीति में असाधारण प्रयोगों और अतुलनीय साहित्यिक क्रिया–कलापों के एक युग को जन्म दिया। खिलजियों की नसों में शाही रक्त नहीं बहता था। वे सर्वहारा के थे और उनके राज्यरोहण ने इस मिथ्या धारण को समाप्त कर दिया कि प्रभुसत्ता पर विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग का ही एकाधिकार है। खिलजी विद्रोह आवश्यक रूप से तुर्की आधिपत्य के विरूद्ध भारतीय मुसलमानों का विद्रोह था। इस क्रान्ति ने शाही रक्त के ऊपर सर्वसाधारण के रक्त का आधिपत्य स्थापित कर दिया और ऐसे अनेक उच्चवर्गीय तुर्कों को स्तम्बित कर दिया, जिनके लिये भारत में जन्में या और भी अन्य मुसलमान उनसे निम्न नस्ल के थे।

न तो वंशाधिकार, न चुनाव और न षड़यंत्र ही से जलालुद्दीन को गद्दी प्राप्त हुयी थी। इलबारियों से खिलजियों के हाथ में सिंहासन केवल शक्ति के द्वारा गया और केवल शक्ति प्रयोग के द्वारा ही वे उसे अपने हाथ में बनाये रखे। खिलजियों ने न तो जनता, न अमीर वर्ग और न ही उलेमा वर्ग का समर्थन प्राप्त किया। उन्होंने चाहे जो कुछ भी देश के लिये बनाया बिगाड़ा, कम से कम मुस्लिम जगत को यह बता दिया कि बिना किसी धार्मिक समर्थन के राज्य न केवल जीवित रह सकता है बल्कि जोरों से कार्य भी कर सकता है।

अन्ततः संक्षेप में हम कह सकते हैं कि खिलजी क्रान्ति ने तुर्की कबीलों के भेद को समाप्त किया, मुसलमानों के बीच राज्य के देवीय सिद्धान्त से उपजे भेद एवं ऊँच नीच को समाप्त करके मुसलमानों का एकीकरण किया जिसके परिणामस्वरूप मुस्लिम एक संगठित शक्ति के रूप में उभरे।

संन्दर्भ ग्रर्थ सूची–

1. एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ जस्टिस इन मैडीवल इण्डिया : एम0 वशीर अहमद, अलीगढ 1941।
2. हिस्ट्री ऑफ डैकिन : जे0डी0बी0 ग्रिबिल, लन्दन, 1898।
3. क्राम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया : सर बुल्जले हेग, तृतीय खण्ड, 1928।
4. साउथ इण्डिया एण्ड हर मौहमडन इनवेडर्स : के0एम0 अशरफ, लन्दन, 1921।
5. ए हिस्ट्री ऑफ दी राइज ऑफ दी मौहमडन पावर : जान ब्रिग्स, कलकत्ता, 1910।
6. हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इटस ओन हिस्टोरियंश : इलियट एण्ड डाउसन, लन्दन, 1987।
7. दि फाउण्डेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया : ए0बी0एम0 हबीबुल्लाह, लाहौर, 1945।
8. स्टडीज इन इण्डों मुस्लिम हिस्ट्री : एस0एच0 होड़ीवाल, बम्बई 1943।
9. दि मौहमडन डायनेस्टीज : एस0 लेनपूल, पेरिस, 1925।
10. मैडीवल इण्डिया : एस0सी0रे0, कलकत्ता 1931।
11. एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ द सल्तनत ऑफ देहली : आई0एच0 कुरैशी, लाहौर 1942।
12. दि सुल्तान ऑफ देहली : नेल्सन राइट, देहली, 1939।

13. मध्यकालीन भारत की सामाजिक दशा : युसुफ अली।
14. भारत का इतिहास : डॉ0 ए0एल0 श्रीवास्तव।
15. खिलजी कालीन भारत : डॉ0 सै0 अतहर अब्बास रिजवी।
16. खिलजी वंश का इतिहास : डॉ0 के0एस0 लाल, विश्व प्रकाशन नई दिल्ली, 1993।
17. दिल्ली सल्तनत : मौ0 हबीब एवं खलीक अहमद निजामी।
18. भारत का इतिहास : प्रो0 रोमिला थापर।
19. भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास : रामगोपाल।
20. आदि तुर्क कालीन भारत : सै0 अ0अ0 रिजवी।

डॉ. नीरज कुमार गौड़
प्राचार्य , एच के एल कालेज ऑफ ऐजूकेशन, सम्बध्द पंजाब विश्वविद्यालय, चंड़ीगढ़ गुरूहरसहाय, फिरोजपुर (पंजाब)